पावन जीवन चरित्र

श्रीश्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी
महाराज जी का जीवन चरित्र

SGD

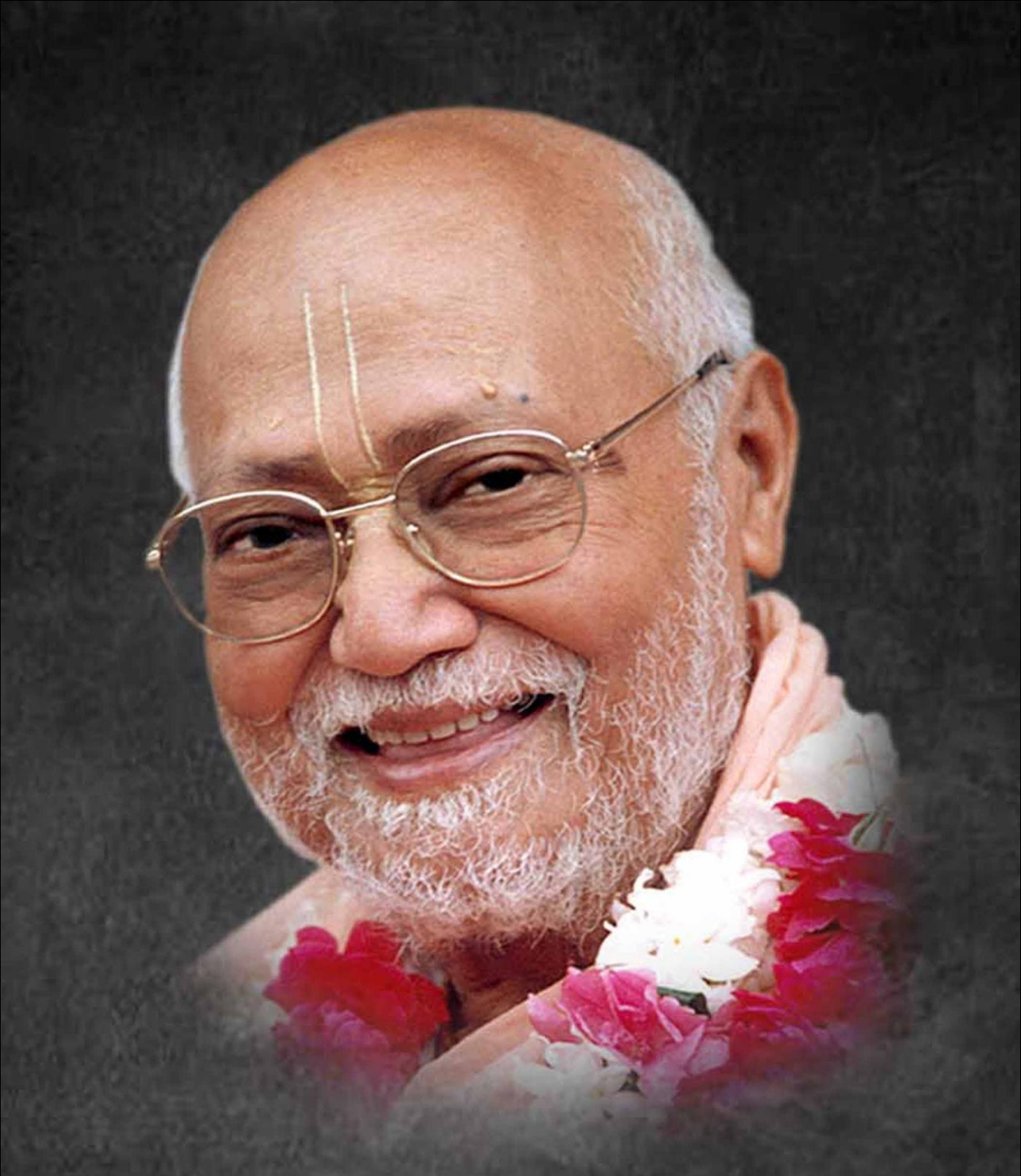

निखिल भारत श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ
प्रतिष्ठान के प्रतिष्ठाता,
नित्यलीला प्रविष्ट ॐ 108
श्री श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी
महाराज विष्णुपाद जी के
प्रियतम शिष्य, त्रिदण्डिस्वामी
श्रीमद् भक्तिबल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज
जी द्वारा सम्पादित

SGD

तृतीय खण्ड

भाग – 9

1977 साल की
श्रीकृष्णजन्माष्टमी के उपलक्ष्य
में धर्मसभा के प्रथम अधिवेशन
में श्रील गुरुदेव जी का
अभिभाषण

श्रीश्रीगुरु- गौरांगौ जयतः

कल को श्रीकृष्ण की आविर्भाव तिथि है, इसलिये आज अधिवास के दिन 'भगवत्प्राप्ति का उपाय' वक्तव्य विषय के रूप में निर्धारित हुआ है। हमारा पहला प्रश्न है, यदि कोई कहे कि मैं भगवान को ही नहीं मानता हूँ इसलिये उनकी प्राप्ति के उपाय के सम्बन्ध में आलोचना निरर्थक है तो उसके उत्तर में कहा गया है कि ईश्वर को मानना सभी जीवों में स्वतः सिद्धरूप से है। आस्तिक, नास्तिक सभी ईश्वर को मानते हैं । जहाँ पर ईशिता या ऐश्वर्य है, वहाँ पर

स्वाभाविक रूप से सभी झुकते हैं। छोटे से छोटे प्राणी भी ईश्वर को मानते हैं। अपनी व्यवहारिक ज़िन्दगी में ईश्वर को हम सभी मानते हैं, इसलिये परमेश्वर मानने में कोई अस्वाभाविकता नहीं है, बल्कि भगवान को मानना अधिक समझदारी की बात है। आग को न मानने से आग का कोई नुकसान नहीं है; दूसरी ओर आग को मानने से आग के द्वारा अनेक प्रकार के कार्य सम्पन्न किये जा सकते हैं, इसलिये जो भगवान को मानता है, उसका ही लाभ है। यह अधिक बुद्धिमानी का परिचायक है।

छोटे-छोटे ईश्वरों को हम देख सकते हैं, इसलिये मानते हैं; परमेश्वर को देखा नहीं जाता, अतएव हम नहीं मानते। यदि इस प्रकार तर्क हो तो उसका उत्तर यह है कि अपनी सीमित ताकत वाली क्षणभंगुर इन्द्रियों के द्वारा हम कितनी उपलब्धि कर सकते हैं। जिन सब विषयों की हमारी इन क्षुद्र - इन्द्रियों के द्वारा उपलब्धि न हो तो उनका अस्तित्त्व हम नहीं मानेंगे, क्या हमारी यह बात युक्तिसिद्ध होगी?

एक-एक प्रकार के विषय को समझने के लिये एक- एक प्रकार की

योग्यता की आवश्यकता होती है। जब तक वह अधिकार या योग्यता अर्जित न हो, तब तक हम उस वस्तु के विषय में ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते हैं। उदाहरण के लिए कहा जा सकता है कि हम बहुत प्रकार की भाषा जानने पर भी यदि उर्दू भाषा न जानते हों तो दूसरी भाषाओं के ज्ञान के द्वारा उर्दू भाषा नहीं समझी जा सकती। आँखें रहने पर भी उर्दू भाषा की शिक्षा रूपी पृथक् अधिकार या योग्यता अर्जन न करने से जिस प्रकार उर्दू भाषा का रूप और शक्ति अर्थात् अर्थ हृदयंगम नहीं होता, उसी प्रकार परमेश्वर की उपलब्धि के लिये जो अधिकार या योग्यता

चाहिये, वह अर्जित न होने तक जितनी प्रकार की भी दुनियावी योग्यता या ज्ञान क्यों न रहें हम उसे समझने अथवा उसकी उपलब्धि करने में समर्थ नहीं होते हैं। परमेश्वर स्वतः- सिद्ध तत्त्ववस्तु होने के कारण उनमें शरणागति बिना, उनकी कृपा बिना कोई भी उनको जानने व अनुभव करने में समर्थ नहीं होता है।

असीम को, सर्वशक्तिमान को किसी ने जान लिया है या समझ लिया है, यह बात कहने से असीम के असीमत्त्व की व सर्वशक्तिमान की सर्वशक्तिमत्ता की हानि होती है।

दूसरी ओर यदि असीम व सर्वशक्तिमान् स्वयं को न जना सकें, वे हमें अपना अनुभव प्रदान न कर पायें तो भी उनके असीमत्त्व की व उनकी सर्वशक्तिमत्ता की हानि होती है। अर्थात् तब भी हम उन्हें असीम या सर्वशक्तिमान् नहीं कह पायेंगे क्योंकि उनमें ये ताकत नहीं है कि वे अपने आपको हमें जना पायें। अतः ये सिद्धान्त बना कि जीव अपनी चेष्टा से भगवान को नहीं जान सकता व नहीं समझ सकता है। हाँ, भगवान यदि कृपा करके जनायें तो जान सकता व समझ सकता है। प्रमाण, यथा कठोपनिषद् :

'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो, न मेधया न बहुना श्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुं स्वाम्॥

(कठो. 1/2/23)

इसलिये अशरणागत व्यक्ति जितनी प्रकार की भी चेष्टा क्यों न कर ले, वह परमेश्वर के अस्तित्त्व की उपलब्धि करने में समर्थ नहीं होता है। अशरणागत हिरण्यकशिपु गदा हाथ में लेकर विष्णु को मारने के लिये बहुत खोजता रहा परन्तु विष्णु को देख न पाया; जबकि शरणागत

भक्त प्रह्लादजी विष्णु की कृपा से विष्णु को सर्वत्र देख पाये।

कोई-कोई कहता है कि भगवान का आकार नहीं हैं, रूप नहीं है, उनके निर्गुण स्वरूप का आविर्भाव नहीं है, मायिक जगत् में आविर्भूत होने के लिये माया के गुण लेकर ही उनको आविर्भूत होना होगा इत्यादि।

उसके उत्तर में कहते हैं कि पहले हमें समझना होगा कि भगवान किसे कहते हैं?

भगवान शब्द का अर्थ क्या है ? "जिनका भग" है उनको भगवान कहते हैं । 'भग' शब्द का अर्थ है - शक्ति | शक्तियुक्त तत्त्व को भगवान् कहते हैं । शास्त्र में (विष्णुपुराण में) भगवान् शब्द का इस प्रकार अर्थ किया गया है- समग्र (तमाम) ऐश्वर्य, समग्र वीर्य, समग्र यश, समग्र सौन्दर्य, समग्र ज्ञान और समग्र वैराग्य जिस तत्त्व में निहित हैं, उन्हें भगवान कहते हैं। क्योंकि भगवान सर्वशक्तिमान हैं, असीम हैं, इसलिये वे किसी भी स्थान पर, जिस-किसी भी रूप में प्रकट हो सकते हैं। यदि वे यह नहीं कर सकते, तब उनकी

सर्वशक्तिमत्ता की, असीमत्त्व की हानि होती है।

वे यह कर सकते हैं, और ये नहीं कर सकते हैं- सर्वशक्तिमान् के सम्बन्ध में इस प्रकार की उक्ति का प्रयोग नहीं हो सकता। हम जो-जो शक्ति भगवान् को देंगे, वह वह शक्ति ही भगवान् में रहेगी, उसके अतिरिक्त नहीं रह सकती, जैसे हम ही परमेश्वर के निर्माता हों, सर्वशक्तिमान् ऐसा नहीं होता व ऐसे को हम सर्वशक्तिमान् कह भी नहीं सकते। हमारी कल्पना में अथवा उससे बाहर जितने प्रकार की शक्ति हो

सकती है एवं हमारी कल्पना के अतीत भी जो शक्तियुक्त-तत्त्व हैं, वे ही भगवान् हैं, उन्हें ही सर्वशक्तिमान् कहते हैं। असीम के लिये कुछ भी असम्भव नहीं हैं -

'कर्तुमकर्त्तुमन्यथा कर्तुं यः समर्थः स एव ईश्वरः ।'

हमारे अनुभव के अनुसार कोई भी आकार- Three dimensions के अन्तर्गत होता है अर्थात् उसकी कुछ लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई होती है । यदि कोई कहे कि असीम का आकार है तो हम झट सोचने

लगते हैं कि वह एक सीमा में बंधे होंगे। चूंकि असीम को आकार में, एक सीमा में बाँधा जा रहा है इसलिये हम ये सोचने को मजबूर हो जाते हैं कि असीम का कोई भी आकार नहीं हो सकता, वे अवश्य ही निराकार होंगे। (जबकि ये गलत है) परन्तु जन-साधारण में तो ऐसा विचार ही प्रचलित है। जबकि भगवान् आकार में रहते हुये भी असीम रह सकते हैं। असीम की यह अचिन्त्य शक्ति साधारण बुद्धि की समझ का विषय नहीं है। गणित शास्त्र के साधारण ज्ञान से हम समझते हैं कि समानान्तर रेखाएँ आपस में कभी भी नहीं मिलती हैं।'

(Parallel straight lines never meet) किन्तु गणित शास्त्र के उच्चस्तर (Higher mathematics) में जाने से पायेंगे कि समानान्तर रेखाएँ असीम में जाकर मिल जाती हैं (They meet at infinite) अंक-शास्त्र के साधारण योग-वियोग के ज्ञान में एक में से एक घटाने पर ज़ीरो बचता है। किन्तु Higher Mathemetics से जाना जाता है कि असीम में से असीम घटाने पर भी असीम ही बाकी बचता है -

'ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाविशिष्यते॥

(वृ. आ. 5 अध्याय प्रथम श्लोक)

शास्त्रों में बहुत से स्थानों पर भगवान को साकार कहा गया है और बहुत से स्थानों पर निराकार कहा गया है। शास्त्रों को मानने से शास्त्रों के दोनों प्रकार के उपदेश ही मानने होंगे। शास्त्रों में असंगत बातें कुछ भी नहीं हैं। संगति किस प्रकार से होती है, उसे समझने की चेष्टा करनी होगी। भगवान को निराकार कहने

का अर्थ है, उनका कोई भी प्राकृत (दुनियावी, नाशवान) आकार नहीं है। साकार कहने का अर्थ है, वे अप्राकृत आकार वाले हैं. -

"अपाणिपाद श्रुति वर्ज्ज प्राकृत
पाणि-चरण।
पुनः कहे, शीघ्र चले, करे सर्वग्रहण "

(चै.च.म. 6/150)

अचिन्त्यशक्ति वाले असीम भगवान में तमाम विरुद्धगुणों का सामञ्जस्य सम्भव है। यदि कोई कहे कि भगवान् जब मायिक जगत् में अवतीर्ण होते हैं तो माया के तीनों

गुणों को स्वीकार करके व मायिक आकार लेकर ही अवतीर्ण होते हैं, अतः भगवान के जितने स्वरूप हैं व अवतारादि हैं, वे सभी मायामय हैं; बड़ा ज़ोर देकर यह कहा जा सकता है कि वे सात्त्विक तनु है, उनका स्वरूप पूर्ण सात्विक है।

उसके जवाब में कहते हैं कि भगवान निर्गुण हैं तो उनका स्वरूप भी निर्गुण है, कभी भी मायिक नहीं है। अर्थात् भगवान का स्वरूप कभी भी माया का बना नहीं हो सकता क्योंकि माया भगवान् के अधीन-तत्त्व है।

भगवान निर्गुण (माया के गुणों से रहित) स्वरूप से ही इस माया के जगत में अवतीर्ण होते हैं। बद्धजीव अपने इन माया के नेत्रों से उनको मायामय ही देखते है। हाँ, निर्गुण शुद्धप्रेम नेत्रों से भगवान का निर्गुणअप्राकृत स्वरूप दर्शन हुआ करता है। समझने की सुविधा के लिये उदाहरण के रूप में कहा जा सकता है कि जैसे जेल में कैदी के लिए एक अलग प्रकार की पोषाक पहनने का नियम है, किन्तु यदि गवर्नर वहाँ जेल का निरीक्षण करने के लिए आ जाये तो उसको वैसी ही पोषाक पहन कर नहीं जाना होगा । वह अपनी पोषाक में ही जा सकता

है। वैसे ही मायिक कारागार में भगवान् जब आते हैं तो उन्हें मायिक बद्धजीव की पोषाक - गुणमय शरीर लेकर नहीं आना होगा । वे अपने निर्गुण स्वरूप से ही आते हैं और वापस चले जाते हैं। यहाँ तक कि भगवान् के धाम से आने वाले उनके भक्त भी अपने निर्गुण स्वरूप में ही इस जगत में आते हैं और वापस चले जाते हैं।

'प्राकृत करिया माने विष्णु कलेवर ।
विष्णुनिन्दा आर नाहि इहार ऊपर॥'

(चै. च. आ. 7 / 115)

भगवान को हम कैसे पा सकते हैं, क्योंकि भगवान तो असमोर्ध्व तत्त्व हैं अर्थात उनके बराबर भी कोई नहीं है व उनसे बड़ा भी कोई नहीं है। वे पूर्ण और असीम हैं, उनके समान या उनसे अधिक कोई भी वस्तु नज़र नहीं आती है।

'न तस्य कार्यं करणंच विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते। परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयेत स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च॥

(श्वे. 3. 6/8)

जिनके समान या अधिक कोई भी वस्तु दिखाई नहीं देती है, तब उनको पाने का उपाय उनको छोड़कर या यूँ कहें कि उनकी इच्छा को छोड़कर दूसरा हो ही नहीं सकता। यदि भगवद् इच्छा को छोड़कर दूसरा कोई उपाय है, ऐसा स्वीकार किया जाये तो वह उपाय या तो भगवान के समान होगा अथवा उनकी अपेक्षा अधिक होगा। किन्तु भगवान के समान या अधिक किसी भी वस्तु की कल्पना नहीं हो सकती है। इसलिए जिसका जो भी मत है, वही भगवत् प्राप्ति का उपाय है, यह कभी भी स्वीकृत नहीं हो सकता । कारण, भगवान् किसी के

भी अधीनतत्त्व नहीं हैं। भगवद् इच्छा से भगवान् को पाने से भगवान् के असमोर्द्ध्वत्व या भगवत्ता की हानि नहीं होती है। भगवद्- इच्छानुवर्तन का अर्थ है भगवान की इच्छा के अनुसार चलना । इसका ही दूसरा नाम भक्ति है। इसी से भगवान की प्राप्ति होती है।

'भज्' धातु से भक्ति शब्द उत्पन्न हुआ है। 'भज्' धातु का अर्थ है सेवा । सेवा का अर्थ है सेव्य का प्रीतिविधान अर्थात सेव्य को प्रसन्न करना । सेव्य के इच्छा के अनुसार चलने से ही सेव्य की प्रीति होती है,

वह प्रसन्न होता है। इसलिए भगवत् प्राप्ति का एकमात्र उपाय है शुद्धा प्रीति या शुद्धा भक्ति।

भक्त्याहमेकाय ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम्। भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात्॥

(भा. 11/14/21)

श्रीकृष्णजी उद्धव से कहते हैं कि एकमात्र भक्ति द्वारा ही उनको प्राप्त किया जा सकता है।

'भक्ति रेवैन नयति भक्तिरेवैनं दर्शयति
भक्तिवशः पुरुषो भक्तिरेव भूयसी।

(माटर श्रुति वचन 3/53)

भक्ति ही भगवान के निकट ले जाती है, भक्ति ही भगवान् को दिखाती है। परम पुरुष भक्ति के वश हैं। इसलिये भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ है।

श्रीलगुरुदेव